राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 2855/2017

मेसर्स शास्त्रीनगर गैस सर्विस पार्टनर श्रीमती वंदना शर्मा पत्नी स्वर्गीय श्री नागेंद्र शर्मा, पता 165, रामनगर शॉपिंग सेंटर, शास्त्री नगर जयपुर राजस्थान वर्तमान में ए-104-डी-1, एडब्ल्यूएचओ योजना, सेक्टर नंबर 1, विद्याधर नगर, जयपुर के माध्यम से।

----अपीलार्थी/आपत्तिकर्ता

बनाम

1. इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड निदेशक विपणन वित्त और लीजिंग कंपनी के माध्यम से प्रोपराइटर दीपक वैध, 21, गोपीनाथ मार्ग, एमआई रोड, जयपुर के माध्यम से।

2. सीनियर एरिया मैनेजर, इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, इंडेन एरिया ऑफिस, एसपीएल-1297, सीतापुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोनेर रोड, जयपुर।

3. महाप्रबंधक (एलपीजी) इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, अशोक चौक, आदर्श नगर, जयपुर 302004।

----प्रत्यर्थीगण/गैर-दावेदार

4. श्री ए.वी. राजन, एकल मध्यस्थ और मुख्य प्रबंधक (इंजीनियरिंग) इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, अशोक चौक, आदर्श नगर, जयपुर राजस्थान-एकल मध्यस्थ।

----मध्यस्थ न्यायाधिकरण (प्रदर्शन पक्ष)

<u>से संबद्ध</u>

एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 2467/2017

1. इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड निदेशक विपणन जी -9, अली यावरजंग मार्ग, बांद्रा (पूर्व) मुंबई -400511 के माध्यम से।

2. सीनियर एरिया मैनेजर, इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड इंडेन एरिया ऑफिस, एसपीएल 1297, सीतापुरा इंडस्ट्रियल एरिया, गोनेर रोड, जयपुर।

3. महाप्रबंधक (एल.पी.जी.) इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, अशोक चौक, आदर्श नगर, जयपुर।

----अपीलार्थीगण/गैर-आवेदक

बनाम

मेसर्स शास्त्री नगर गैस सर्विस पार्टनर श्रीमती वंदना शर्मा पत्नी स्वर्गीय श्री नागेंद्र शर्मा, निवासी 165, राम नगर शॉपिंग सेंटर, शास्त्री नगर, जयपुर के माध्यम से वर्तमान में ए-104-डी-1 एडब्ल्यूएचओ योजना, सेक्टर, नंबर 1, विद्याधर, नगर, जयपुर के माध्यम से कार्य कर रही है।

----प्रत्यर्थी/आवेदक

श्री ए. वी. राजन, एकल मध्यस्थ और मुख्य प्रबंधक (इंजीनियरिंग), इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन, अशोक चौक, आदर्श नगर, जयपुर।

----प्रदर्शन पक्ष-एकल मध्यस्थ

अपीलार्थी (गण) की ओर से : श्री देवीदत्त शर्मा, श्री राजेश महर्षि सुश्री ऐश्वर्या।

प्रत्यर्थी (गण) की ओर से : श्री समित बिश्नोई।

माननीय श्री न्यायमूर्ति अशोक कुमार गौड़

<u>आदेश</u>

<u>रिपोर्टेबल</u>

आदेश सुरक्षित करने की तारीख : 02/09/2021

उच्चारित करने की तारीख : 28/10/2021

इन दो अपीलों को इस सामान्य आदेश द्वारा एक साथ तय किया जाता है, क्योंकि दोनों अपीलों में शामिल मुद्दे समान हैं।

<u>एसबी सीएमए संख्या 2855/2017:-</u>

2. अपीलार्थी - मेसर्स शस्तरीनगर गैस सर्विस ने **मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (संक्षेप में "1996 का अधिनियम")** की धारा 34 के तहत पारित 13 फरवरी, 2017

के आदेश को चुनौती देते हुए अपील दायर की है, जिसमें एकल मध्यस्थ द्वारा पारित 19 फरवरी, 2016 के निर्णय के विरूद्ध अपीलार्थी द्वारा दायर आवेदन को अपास्त कर दिया गया था।

3. अपीलार्थी को 1995 में तरलीकृत पेट्रोलियम गैस (एलपीजी) के वितरक के रूप में नियुक्त किया गया था। प्रत्यर्थीगण ने 8 सितंबर, 2012 को औचक निरीक्षण और रिफिल लेखापरीक्षा की थी। प्रत्यर्थीगण ने अपने निरीक्षण में डिस्ट्रीब्यूटरशिप में निम्नलिखित बड़ी/छोटी अनियमितताएं पाईं-

(क) 331 ग्राहकों को बिना बारी के रिफिल डिलीवरी की गई।

(ख) रिफिल वाउचर पर ग्राहक के हस्ताक्षर नहीं लिए जा रहे हैं।

(ग) 103 सिलेंडरों को इंडसॉफ्ट में वितरित दिखाया गया था, लेकिन वास्तव में उपभोक्ताओं को उनकी ब्लू बुक के अनुसार वितरित नहीं किया गया था।

4. अपीलार्थी ने कारण बताओ नोटिस का उत्तर दायर किया और गैर-घरेलू उपयोग के लिए सिलेंडरों के विपथन के आरोपों से इनकार किया और इसके अलावा, उपभोक्ताओं के शपथ-पत्र और दस्तावेज भी प्रस्तुत किए गए।

5. प्रत्यर्थीगण ने दिनांक 6 जून, 2013 के आदेश के तहत पिछले दो वर्षों के दौरान द्वितीय एमडीजी (विपणन अनुशासन दिशानिर्देश) के उल्लंघन के रूप में 1,42,526/- रुपए का जुर्माना लगाया और अपीलार्थी के चालू खाते से समायोजित वसूली की।

6. अपीलार्थी ने मध्यस्थता खंड को लागू किया और पक्षकारों के बीच निष्पादित समझौते के खंड संख्या 37 के अनुसार मध्यस्थ नियुक्त करने का अनुरोध किया।

7. प्रत्यर्थीगण ने आईओसीएल के मुख्य प्रबंधक (अभियंता) श्री एवी राजन को मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया।

8. अपीलार्थी ने मध्यस्थ के समक्ष अपना दावा प्रस्तुत किया और पूर्वाग्रह पूर्ण रवैये के साथ मध्यस्थता कार्यवाही करने के संबंध में आपत्तियां उठाईं।

9. प्रत्यर्थी-निगम ने दावा याचिका पर उत्तर दायर किया और आगे प्रत्युत्तर दायर किया किया गया और 15 अक्तूबर, 2014 को मध्यस्थ द्वारा मुद्दे तय किए गए।

10. चूंकि, मध्यस्थ उचित और निष्पक्ष तरीके से मध्यस्थता का संचालन नहीं कर रहा था, इसलिए अपीलार्थी ने मध्यस्थ के जनादेश को समाप्त करने और मध्यस्थ को प्रतिस्थापित करने के लिए उच्च न्यायालय के समक्ष 1996 के अधिनियम की धारा 14 और 15 के तहत याचिका दायर की। यह मामला उच्च न्यायालय के समक्ष न्यायाधीन था, तथापि, मध्यस्थ ने कार्यवाही जारी रखी और 19 फरवरी, 2016 को एकपक्षीय निर्णय सुनाया।

11. अपीलार्थी ने 19 फरवरी, 2016 के एकपक्षीय निर्णय के विरूद्ध व्यथित महसूस करते हुए 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन दायर किया।

12. अपीलार्थी ने 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन में विभिन्न आधार उठाए और निम्नलिखित मुख्य आधार उठाए गए:

(क) मध्यस्थ ने 1996 के अधिनियम की धारा 12 के तहत अपने हित की घोषणा नहीं की, क्योंकि वह प्रत्यर्थी के कार्यालय में अधिकारी के रूप में काम कर रहा था।

(ख) मध्यस्थ स्वतंत्र नहीं था और वह पूर्वाग्रह के साथ काम कर रहा था।

(ग) कार्यवाही मध्यस्थ द्वारा कानून के अनुसार नहीं की गई थी और पक्षकारों की सहमति से कोई प्रक्रिया नहीं बनाई गई थी।

(घ) सुनवाई का कोई अवसर नहीं दिया गया और प्रत्यर्थीगण के गवाह को जिरह की अनुमति नहीं दी गई और एकतरफा आदेश पारित किया गया।

(ङ) पंचाट में कोई कारण नहीं था और यह भारत के कानून और सार्वजनिक नीति के विरूद्ध था।

13. अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश ने 13 फरवरी, 2017 के आदेश के तहत चार मुद्दों पर विचार करने के बाद अपीलार्थी के आवेदन को अपास्त कर दिया, जो आवेदन की सुनवाई के दौरान तैयार किए गए थे। निचली अदालत ने 19 फरवरी, 2016 के निर्णय की पुष्टि की।

14. अपीलार्थी ने अपनी अपील में निम्नलिखित आधार उठाए हैं:

(i) निचली अदालत विधिक पहलू पर विचार करने में विफल रहा है कि मध्यस्थ को 1996 के अधिनियम की धारा 12 (i) के तहत अपने हित की घोषणा करने की आवश्यकता थी, लेकिन वह ऐसा करने में विफल रहा। मध्यस्थ प्रत्यर्थीगण के नियंत्रण में था और इस तरह, वह स्वतंत्र और स्वतंत्र नहीं था।

(ii) मध्यस्थ 1996 के अधिनियम की धारा 13 (i) (4) और 19 के अनुसार मध्यस्थता कार्यवाही करने की प्रक्रिया तैयार करने में विफल रहा और न ही राजस्थान उच्च न्यायालय की नियमावली का पालन किया गया और इस तरह, मध्यस्थ ने कानून और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विरूद्ध काम किया।

(iii) मध्यस्थ ने रिकॉर्ड पर दस्तावेजों और साक्ष्यों पर उचित विचार किए बिना निर्णय दिया है और 1996 के अधिनियम की धारा 31 (3) के अनुसार यह निर्णय तर्कसंगत नहीं है। मध्यस्थ निर्णय पारित करने में विफल रहा और उसने उपभोक्ताओं के शपथ-पत्रों पर विचार नहीं किया, जो उनके समक्ष दायर किए गए थे।

(iv) 1996 के अधिनियम की धारा 18 और 27 के अनुसार दोनों पक्षों को समान व्यवहार नहीं दिया गया था।

(v) यह निर्णय कानून की नजर में दूषित है क्योंकि अपीलार्थी द्वारा चुनौती दिए जाने पर न्यायलय ने पहले एमडीजी को रद्द कर दिया था और यदि पहला एमडीजी कायम नहीं था तो दूसरा एमडीजी लगाने का कोई आधार नहीं था।

15. वितरक-दावेदार की ओर से प्रस्तुत अधिवक्ता ने निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा किया है:-

1. अयाउबखान नूरखान पठान बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य, [(2013)4 एससीसी 465] में प्रकाशित ।
2. नाज़िम एच. काज़ी बनाम कोकन मर्चेंटाइल कोऑपरेटिव बैंक लिमिटेड ने [(2013)2 बीसीआर 193] में प्रकाशित।
3. बिवाटर पेनस्टॉक्स लिमिटेड बनाम ग्रेटर मुंबई और अन्य नगर निगम की एमएएनयू/एमएच/1531/2010 में प्रकाशित।

4. ऑटो क्राफ्ट इंजीनियर्स बनाम अक्षर ऑटोमोबाइल एजेंसीज प्राइवेट लिमिटेड, [(2016) एससीसी ऑनलाइन बॉम 5185] में प्रकाशित।

16. पक्षकारों के अधिवक्ताओं को सुना और उनकी सहायता से रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

17. इन दो अपीलों पर निर्णय लेने के लिए इस न्यायालय के समक्ष प्राथमिक प्रश्न 1996 के अधिनियम की धारा 34 के दायरे के संबंध में है और यह मुद्दा है कि क्या मध्यस्थ कार्यवाही में दोनों पक्षों को पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया है और क्या मध्यस्थ द्वारा प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का अनुपालन किया गया है या नहीं।

18. इस न्यायालय ने पाया कि अपीलार्थी द्वारा दावे का बयान दायर करने के बाद, प्रत्यर्थी-निगम ने अपना उत्तर दायर किया था और उसके बाद प्रत्युत्तर दायर किया गया था और मामले को मुद्दों को तय करने के लिए रखा गया था। 15.10.2015 को मध्यस्थ द्वारा मुद्दे तैयार किए गए थे और उसके बाद पक्षकारों को साक्ष्य में शपथ-पत्र प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया था और प्रत्यर्थी-निगम ने 06.11.2015 को अपना शपथ-पत्र दायर किया और मध्यस्थ ने 09.11.2015 के आदेश के तहत दावेदार को अपना शपथ-पत्र दायर करने का निर्देश दिया और जब दावेदार के अधिवक्ता को दी गई विभिन्न तारीखों के बावजूद, न तो शपथ-पत्र दायर किया गया और न ही दावेदार के अधिवक्ता स्वयं उपस्थित हुए। मामले को 16.12.2015 को मौखिक बहस के लिए निर्धारित किया गया था, हालांकि, अपीलार्थी-दावेदार ने साक्ष्य में शपथ-पत्र दायर करने के लिए एक और अवसर मांगा और अंत में यह 24.12.2015 को दायर किया गया और दोनों पक्षों को 04.01.2016 को अपनी लिखित/मौखिक दलीलें प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया। इसके बाद, दावेदार ने कार्यवाही पर रोक लगाने के लिए 04.01.2016, 07.01.2016, 14.01.2016 और 28.01.2016 को आवेदन दायर किए, जिसे अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि कार्यवाही पर रोक लगाने का कोई उचित कारण नहीं था और 01.02.2016 को बहस आगे बढ़ाने के लिए अंतिम अवसर निर्धारित किया गया था। अपीलार्थी-दावेदार के अधिवक्ता 01.02.2016 को उपस्थित थे, लेकिन उन्होंने दलीलों को जारी रखने से इनकार कर दिया और इस तरह मध्यस्थ ने प्रत्यर्थी-निगम के अधिवक्ता को सुनने के बाद निर्णय सुरक्षित रख लिया।

19. इस न्यायालय ने पाया कि अपीलार्थी-दावेदार के अधिवक्ता को न केवल साक्ष्य में

शपथ-पत्र दायर करने के लिए बल्कि अपने लिखित/मौखिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए भी कई अवसर दिए गए थे। इस न्यायालय ने आगे पाया कि मध्यस्थ की कार्यवाही के अनुसार, अपीलार्थी-दावेदार की ओर से 01.02.2016 को उपस्थित अधिवक्ता ने भी अपनी दलीलें जारी रखने से इनकार कर दिया।

20. मध्यस्थ ने दावे को देखने के बाद, दोनों पक्षों द्वारा दायर दावों और दस्तावेजों का उत्तर दिया और दस्तावेजों को देखने और दलीलों पर विचार करने के बाद, अपने निर्णय में निष्कर्ष पर पहुंचने का कारण बताया। मध्यस्थ के समक्ष की गई कार्यवाही कहीं भी यह नहीं दिखाती है कि अपीलार्थी-दावेदार को अपने मामले की पैरवी करने या साक्ष्य का नेतृत्व करने के लिए पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया था। पर्याप्त अवसर नहीं देने का आरोप मध्यस्थ द्वारा की गई पूरी कार्यवाही से समर्थित और परिलक्षित नहीं होता है।

21. अपीलार्थी की यह दलील कि मध्यस्थ 1996 के अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (1) के तहत अपने हित की घोषणा करने में विफल रहा था और इस प्रकार, वह मध्यस्थ कार्यवाही करने के लिए सक्षम नहीं था, इस न्यायालय ने पाया कि एकल मध्यस्थ ने 10.03.2014 के अपने पत्र के माध्यम से, एकल मध्यस्थ के रूप में अपनी नियुक्ति के बाद, घोषणा की थी कि उसकी निष्पक्षता या स्वतंत्रता के बारे में उचित संदेह को जन्म देने के लिए कोई परिस्थितियां नहीं थीं। 1996 के अधिनियम की धारा 12 (1) के अनुसार, एकल मध्यस्थ द्वारा की गई घोषणा को उक्त मुद्दे पर ज्यादा चर्चा की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि अपीलार्थी द्वारा उठाया गया है।

22. अपीलार्थी के अधिवक्ता की यह दलील कि न तो 1996 के अधिनियम की धारा 19 के तहत कार्यवाही की गई थी और न ही राजस्थान उच्च न्यायालय के मैनुअल का पालन किया गया था, इस न्यायालय द्वारा यह कहने के लिए पर्याप्त है कि मध्यस्थ द्वारा दोनों पक्षों को समान अवसर दिया गया था और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत का पालन किया गया था, क्योंकि दोनों पक्षों को अपने दस्तावेजी साक्ष्य का नेतृत्व करने के लिए पर्याप्त अवसर दिया गया था।

23. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता की यह दलील कि 1996 के अधिनियम की धारा 31 (3) के अनुसार, यह निर्णय तर्कसंगत निर्णय नहीं है, इस न्यायालय द्वारा यह कहने के लिए पर्याप्त है कि मध्यस्थ ने पक्षों की दलीलों और साक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए,

निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए ठोस कारण दिए हैं और इस प्रकार, यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि उचित अधिनिर्णय पारित नहीं किया गया है।

24. अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा *अयाउबखान नूरखान पठान (सुप्रा.)* के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा करते हुए, उक्त मामले में उच्चतम न्यायालय एक उम्मीदवार के जाति प्रमाणपत्र जारी करने से संबंधित थी। उच्चतम न्यायालय ने जिरह के दायरे को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का हिस्सा माना है और कहा है कि यदि जाति प्रमाणपत्र के बारे में कोई गंभीर आरोप लगाया जाता है और जांच समिति ने जांच की है, तो ऐसी स्थिति में ऐसे उम्मीदवार को गवाह से जिरह करने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए। इस न्यायालय ने पाया कि उक्त निर्णय की वर्तमान विवाद से कोई प्रासंगिकता नहीं है।

25. *नाजिम एच. काजी (सुप्रा.)* के मामले में मुंबई उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा भरोसा रखा गया, यह न्यायालय मामले के तथ्यों से पाती है कि उक्त मामले में दोनों पक्ष मध्यस्थ न्यायाधिकरण के समक्ष सहमत नहीं हुए थे कि दोनों पक्षों द्वारा कोई साक्ष्य नहीं दिया जाना था और दस्तावेजों के आधार पर कार्यवाही की जानी थी। मध्यस्थ के रिकॉर्ड से संकेत मिलता है कि याचिकाकर्ता ने मुख्य जांच के बदले शपथ-पत्र दायर किया था और उसने विभिन्न विवादित तथ्यों पर अपनी गवाही के समर्थन में जिरह के लिए खुद को प्रस्तुत किया था और उसने प्रत्यर्थीगण के गवाह से जिरह करने की अनुमति भी मांगी थी। मुंबई उच्च न्यायालय ने उस मामले की तथ्य स्थिति पर विचार करने के बाद पाया कि मध्यस्थ केवल दस्तावेजों और अन्य सामग्रियों के आधार पर मामले का संचालन नहीं कर सकता था, जबकि याचिकाकर्ता ने खुद समग्र साक्ष्य का नेतृत्व करने का अवसर मांगा था और खुद को जिरह के लिए उपलब्ध कराया था।

26. *बिवाटर पेनस्टॉक्स लिमिटेड (सुप्रा.)* के मामले में मुंबई उच्च न्यायालय द्वारा निर्णय पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए भरोसे पर, न्यायालय ने द्वारा कुछ दस्तावेजों को सिद्ध किए बिना साक्ष्य में स्वीकार करने के तथ्य पर विचार किया किया है और इसे विधिक कदाचार और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के घोर उल्लंघन के रूप रूप में माना गया था और तदनुसार निर्णय को रद्द कर दिया गया था। मुंबई उच्च

न्यायालय ने आगे कहा है कि भले ही पंचाट एक सकारण आदेश नहीं है, हालांकि, यह कानून के अनुसार और प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप होना चाहिए। उक्त निर्णय अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के लिए बहुत कम मदद करता है।

27. *मेसर्स ऑटो क्राफ्ट इंजीनियर्स (सुप्रा.)* के मामले में मुंबई उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा किए गए भरोसे पर, इस न्यायालय ने पाया कि मुंबई उच्च न्यायालय ने मध्यस्थ की कार्यवाही पर विचार करने के बाद कहा है कि किसी व्यक्ति को केवल इस आधार पर मध्यस्थ कार्यवाही में भाग लेने से नहीं रोका जा सकता है कि उसने मध्यस्थ द्वारा दी गई लागत के भुगतान का अनुपालन नहीं किया है। इस प्रकार निर्णय को कठोर, अन्यायपूर्ण, अनुचित और मनमाना पाया गया और निर्णय को प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विरूद्ध भी पाया गया क्योंकि मध्यस्थ द्वारा बचाव को अपास्त कर दिया गया था।

28. *बरेली इलेक्ट्रिसिटी सप्लाई कंपनी लिमिटेड (सुप्रा.)* के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा किए गए भरोसे पर, उच्चतम न्यायालय के समक्ष मुद्दा श्रमिकों को बोनस के भुगतान के संबंध में था और श्रम न्यायालय द्वारा उसी आशय का निर्णय पारित किया गया था। इस न्यायालय ने पाया कि उक्त निर्णय का वर्तमान मामले के तथ्यों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है।

29. अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा *इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन और एएनआर (सुप्रा.),* के मामले में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय पर भरोसा किया गया। मद्रास उच्च न्यायालय ने माना है कि मध्यस्थ के पास सभी विवादों और पक्षकारों के बीच उत्पन्न होने वाले मतभेदों को तय करने की सभी शक्तियां हैं और दावेदार की डीलरशिप को बहाल किया जा सकता है।

30. तदनुसार, यह न्यायालय पाता है कि यह झूठी अपील अपास्त किए जाने योग्य है और इसे अपास्त किया जाता है और अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश संख्या 18, जयपुर मेट्रोपॉलिटन द्वारा 13.02.2017 को पारित आदेश को 19.02.2016 बरकरार रखा जाता है।

<u>एसबी सीएमए संख्या 2467/2017 के तथ्य: -</u>

31. अपीलार्थी-इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन ने 1 अप्रैल, 2017 के आदेश को चुनौती दी है, जिसके तहत प्रत्यर्थी-मेसर्स शस्तरीनगर गैस सर्विस द्वारा 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर आवेदन को स्वीकार कर लिया गया है और एकल मध्यस्थ द्वारा पारित 16 अगस्त, 2016 के निर्णय को रद्द कर दिया गया है।

32. अपीलार्थीगण ने प्रत्यर्थी-दावेदार की जांच के दौरान 24 जून, 2013 को जांच की थी और निरीक्षण के दौरान डिस्ट्रीब्यूटरशिप में बड़ी/मामूली अनियमितताएं पाई गई थीं और अनियमितताएं प्रकृति की थीं, जो इस प्रकार हैं:-

(i) डिलीवरीमैन के पास वजन स्केल, लीक डिटेक्टर और डिस्ट्रीब्यूटरशिप के पहचान-पत्र नहीं थे।

(ii) ग्राहकों ने बताया कि उन्हें रिफिल के लिए बुकिंग के बिना रिफिल डिलीवरी पुष्टिकरण संदेश मिल रहा है।

(iii) रिफिल डिलीवरी सत्यापन के दौरान रिफिल की संख्या 5 ग्राहकों ने 26 नंबर प्राप्त न होने की पुष्टि की।

33. अपीलार्थी-निगम ने वितरक के स्पष्टीकरण की मांग की और प्रत्यर्थी-दावेदार द्वारा प्रस्तुत उत्तर संतोषजनक नहीं पाया गया और अपीलार्थी ने दिनांक 31 अक्टूबर, 2013 के पत्र के माध्यम से इस आधार पर तीसरे एमडीजी के उल्लंघन के रूप में जुर्माना लगाया कि दावेदार का उत्तर तर्कसंगत और संतोषजनक नहीं पाया गया था। पक्षकारों के बीच विवाद के कारण, एकल मध्यस्थ नियुक्त किया गया था।

34. एकल मध्यस्थ ने मध्यस्थता कार्यवाही का संचालन किया और 22 फरवरी, 2016 के निर्णय के तहत, प्रत्यर्थी-दावेदार की दावा याचिका अपास्त कर दी गई।

35. 22 फरवरी, 2016 के निर्णय को प्रत्यर्थी द्वारा 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर करके चुनौती दी गई थी।

36. उक्त आवेदन को दिनांक 4 जून, 2016 के आदेश द्वारा स्वीकार कर लिया गया और दिनांक 22 फरवरी, 2016 के निर्णय को रद्द कर दिया गया था। न्यायालय ने मध्यस्थ को निर्देश दिया कि वह दावेदार की आपत्ति पर एक तर्कसंगत आदेश पारित करे ताकि जिरह का अवसर मिल सके और आगे दोनों पक्षों को उचित अवसर देने के बाद और

उच्च न्यायालय द्वारा बनाए गए एडीआर नियमों का पालन करते हुए, मध्यस्थ को 1996 के अधिनियम की धारा 19 के तहत निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार निर्णय सुनाना था।

37. एकल मध्यस्थ ने मामले की रिमांड के बाद 16 अगस्त, 2016 को एक निर्णय पारित किया और प्रत्यर्थी-दावेदार के दावे को अपास्त कर दिया गया।

38. प्रत्यर्थी-दावेदार ने 16 अगस्त, 2016 के निर्णय के विरूद्ध व्यथित महसूस करते हुए 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत एक आवेदन दायर किया।

39. निचली अदालत ने दिनांक 1 अप्रैल, 2017 के आदेश के तहत प्रत्यर्थी-दावेदार के आवेदन को स्वीकार कर लिया है और 16 अगस्त, 2016 के निर्णय को रद्द कर दिया है।

40. अपीलार्थी ने 1 अप्रैल, 2017 के आदेश को निम्नलिखित आधारों पर चुनौती दी है: -

(i) निचली अदालत 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत न्यायालय के अधिकार क्षेत्र के दायरे पर विचार करने में विफल रहा है।

(ii) निचली अदालत ने 1996 के अधिनियम की धारा 19 की गलत व्याख्या की है और गलती से कहा है कि मध्यस्थ प्रत्यर्थी-वितरक को निगम के अधिकारियों से पूछताछ करने की अनुमति देने के लिए बाध्य था।

(iii) निचली अदालत मामले के गुणागुण पर विचार नहीं कर सकता था और 1996 के अधिनियम की धारा 34 के दायरे के अनुसार इसकी अनुमति नहीं है।

(iv) न्यायालय ने 04 जून, 2016 के पिछले आदेश में पारित निर्देश की गलत व्याख्या की और गलत समझा।

(v) 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत निचली अदालत अधिनिर्णय पर अपीलीय अदालत के रूप में नहीं बैठ सकती है और साक्ष्यों की फिर से सराहना नहीं कर सकती है या मध्यस्थ पंचाट के गुणागुण में नहीं जा सकती है या तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है और सामग्री का पुनर्मूल्यांकन कर सकती है और मध्यस्थ के दृष्टिकोण के स्थान पर अपने स्वयं के दृष्टिकोण को प्रतिस्थापित कर सकती है, अनुमति नहीं है।

(vi) निचली अदालत इस बात पर विचार करने में विफल रहा है कि प्रक्रिया के नियमों के

के निर्धारण से संबंधित 1996 के अधिनियम की धारा 19 के अनुसार, मध्यस्थ न्यायाधिकरण नागरिक प्रक्रिया संहिता या भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 से बाध्य नहीं है है और यह मध्यस्थ को तय करना है कि क्या मामले के तथ्यों में, साक्ष्यों की जिरह की जरूरत थी या नहीं?

(vii) 1996 के अधिनियम की धारा 19 का दायरा केवल प्राकृतिक न्याय के अनुपालन के लिए है और यदि दोनों पक्षों को मामले पर निर्णय लेने के लिए पर्याप्त अवसर दिया गया है, तो इसके परिणामस्वरूप प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं हो सकता है जब पक्षकारों के संबंधित दावों को सिद्ध करने के लिए उचित समय और अवसर प्रदान किया गया था।

(viii) निचली अदालत प्रत्यर्थी-दावेदार के आचरण को देखने में विफल रहा है क्योंकि मामले के गुणागुण के आधार पर दलीलों को आगे बढ़ाने से इनकार करके मध्यस्थता कार्यवाही के उद्देश्य को विफल करने का जानबूझकर उद्देश्य था।

41. इस न्यायालय ने पाया कि मध्यस्थ ने मध्यस्थ कार्यवाही के दौरान, वितरक-दावेदार को अवसर देने के बाद, दिनांक 29.12.2015 के आदेश के तहत रिकॉर्ड पर साक्ष्य के रूप में शपथ-पत्र लिया। मध्यस्थ ने पक्षकारों को अपनी मौखिक दलीलों के लिए 04.01.2016 को उपस्थित रहने का भी निर्देश दिया था। मध्यस्थ ने अपने दिनांक 22.01.2016 के आदेश के तहत पाया कि अपीलार्थी-निगम द्वारा मध्यस्थ के समक्ष प्रस्तुत किए गए साक्ष्य दस्तावेजी साक्ष्य पर आधारित थे और इस प्रकार, उन्होंने क्रॉस-एग्जामिनेशन के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया और दोनों पक्षों को 01.02.2016 को अपनी लिखित दलीलें प्रस्तुत करने और उसी दिन अपनी मौखिक दलीलें प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया।

42. इस न्यायालय ने पाया कि चूंकि दावेदार के अधिवक्ता ने मध्यस्थता कार्यवाही में भाग लेने से इनकार कर दिया था, इसलिए 22.02.2016 को निर्णय सुनाया गया था।

43. इस न्यायालय ने निर्णय के अवलोकन से पाया कि 15.07.2016 और 26.07.2016 को गवाह से जिरह के लिए एक आवेदन दायर करके अनुरोध किया गया था और मध्यस्थ ने एक आदेश पारित किया कि प्रत्यर्थी-निगम द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य उसके पास उपलब्ध दस्तावेजी साक्ष्य पर आधारित थे और इसे मध्यस्थ कार्यवाही में भी प्रस्तुत किया गया था।

था। गवाह से जिरह की कोई आवश्यकता नहीं थी और इस प्रकार, जिरह के अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया था और दोनों पक्षों से अंतिम बहस के लिए 03.08.2016 को उपस्थित होने का अनुरोध किया गया था।

44. अधिनिर्णय के अवलोकन से यह भी पता चलता है कि प्रत्यर्थी-निगम के गवाहों से जिरह के अनुरोध को अस्वीकार करने के बाद, दावेदार ने अवसर देने के लिए एक और आवेदन किया और उसे भी अस्वीकार कर दिया गया और अंत में मध्यस्थ ने मामले को बहस के लिए तय कर दिया, हालांकि, दावेदार के अधिवक्ता ने मामले पर बहस करने से इनकार कर दिया और इस तरह, पंचाट आरक्षित था।

45. अधिनिर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि सभी मुद्दों पर मध्यस्थ द्वारा निर्णय लिया गया था और वितरक के विरुद्ध लगाए गए आरोप को बड़ी अनियमितताएं करने का सिद्ध पाया गया था और इस प्रकार, निगम के निर्णय को बरकरार रखा गया था।

1996 के अधिनियम की धारा 18, 19 और 34 का दायरा

46. **एमएमटीसी लिमिटेड बनाम वेदांता लिमिटेड ने (2019) 4 एससीसी 163** में प्रकाशित 1996 के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा 1996 के अधिनियम की धारा 34 और 37 के दायरे को कम कर दिया गया है। निर्णय के प्रासंगिक अंश नीचे दिए गए हैं:-

> "10. आगे बढ़ने से पहले, हमें भारत में एक मध्यस्थ पंचाट के साथ हस्तक्षेप की गुंजाइश के संबंध में कानून की मौजूदा स्थिति पर संक्षेप में फिर से विचार करना आवश्यक लगता है, हालांकि हम इसके बारे में सिद्धांतों पर विस्तार से चर्चा करके इस निर्णय पर बोझ नहीं डालना चाहते हैं। इस तरह का हस्तक्षेप मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (संक्षेप में, "1996 अधिनियम") की धारा 34 या धारा 37 के संदर्भ में किया जा सकता है। जबकि, पहला मध्यस्थ पंचाट के लिए चुनौतियों से संबंधित है, दूसरा, अन्य बातों के साथ-साथ, धारा 34 के तहत किए गए आदेश के विरूद्ध अपील से संबंधित है, जो मध्यस्थ पंचाट को रद्द करने या रद्द करने से इनकार करता है।
>
> 11. जहां तक धारा 34 का संबंध है, स्थिति अब तक अच्छी तरह से

तय हो चुकी है कि न्यायालय मध्यस्थ निर्णय पर अपील में नहीं बैठता है और धारा 34 (2) (ख) (ii) के तहत प्रदान किए गए सीमित आधार पर योग्यता के आधार पर हस्तक्षेप कर सकता है, अर्थात यदि निर्णय भारत की सार्वजनिक नीति के विरूद्ध है। 2015 में 1996 के अधिनियम में संशोधन से पहले इस न्यायालय के निर्णयों के माध्यम से स्पष्ट विधिक स्थिति के अनुसार, भारतीय सार्वजनिक नीति के उल्लंघन में, बदले में, भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन, भारत के हित का उल्लंघन, न्याय या नैतिकता के साथ संघर्ष और मध्यस्थ पंचाट में पेटेंट अवैधता का अस्तित्व शामिल है। इसके अतिरिक्त, "भारतीय कानून की मौलिक नीति" की अवधारणा में विधियों और न्यायिक मिसालों का अनुपालन, न्यायिक दृष्टिकोण अपनाना, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का अनुपालन और वेडनेस्बरी तर्कसंगतता शामिल होगी। इसके अलावा, "पेटेंट "पेटेंट अवैधता" को भारत के मूल कानून का उल्लंघन, 1996 के अधिनियम का उल्लंघन और अनुबंध की शर्तों का उल्लंघन माना गया है। है।

12. यह केवल तभी होता है जब इन शर्तों में से एक को पूरा किया जाता है कि न्यायालय धारा 34 (2) (ख) (ii) के संदर्भ में एक मध्यस्थ मध्यस्थ पंचाट में हस्तक्षेप कर सकता है, लेकिन इस तरह के हस्तक्षेप में विवाद के गुणों की समीक्षा शामिल नहीं है, और यह उन स्थितियों तक तक सीमित है जहां मध्यस्थ के निष्कर्ष मनमाने, मनमौजी या विकृत हैं, हैं, या जब न्यायालय की अंतरात्मा चौंक जाती है, या जब अवैधता मामूली नहीं होती है, बल्कि मामले की जड़ तक जाती है। एक मध्यस्थ पंचाट में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है यदि मध्यस्थ द्वारा लिया गया दृष्टिकोण तथ्यों पर आधारित एक संभावित दृष्टिकोण है। बिल्डर्स बनाम डीडीए, (2015) 3 एससीसी 49 देखें)। ओएनजीसी लिमिटेड लिमिटेड बनाम सॉ पाइप्स लिमिटेड, (2003) 5 एससीसी 705 भी देखें; हिंदुस्तान जिंक लिमिटेड बनाम फ्रेंड्स कोल कार्बोनाइजेशन, (2006) 4

एससीसी 445; और मैकडरमॉट इंटरनेशनल बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड, (2006) 11 एससीसी 181) भी देखें।

13. यह ध्यान रखना प्रासंगिक है कि धारा 34 में 2015 के संशोधनों के बाद, उपरोक्त स्थिति कुछ हद तक संशोधित हो गई है। धारा 34 (2) में स्पष्टीकरण 1 को शामिल करने के अनुसरण में, भारतीय सार्वजनिक नीति के उल्लंघन के दायरे को इस हद तक संशोधित किया गया है कि अब इसका मतलब है कि पंचाट बनाने में धोखाधड़ी या भ्रष्टाचार, अधिनियम की धारा 75 या धारा 81 का उल्लंघन, भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन, और न्याय या नैतिकता की सबसे बुनियादी धारणाओं के साथ संघर्ष है। इसके अतिरिक्त, धारा 34 में उपधारा (2क) जोड़ी गई है, जिसमें प्रावधान है कि घरेलू मध्यस्थता के मामले में, भारतीय सार्वजनिक नीति के उल्लंघन में पंचाट के चेहरे पर दिखाई देने वाली पेटेंट अवैधता भी शामिल है। उसी के परंतुक में कहा गया है कि किसी निर्णय को केवल कानून के गलत अनुप्रयोग के आधार पर या साक्ष्यों की पुन: प्रशंसा के आधार पर रद्द नहीं किया जाएगा।

14. जहां तक धारा 37 के अनुसार, धारा 34 के तहत किए गए आदेश में हस्तक्षेप का सवाल है, तो इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता है कि धारा 37 के तहत इस तरह का हस्तक्षेप धारा 34 के तहत निर्धारित प्रतिबंधों से परे नहीं जा सकता है। दूसरे शब्दों में, न्यायालय निर्णय के गुणागुण का स्वतंत्र मूल्यांकन नहीं कर सकता है, और उसे केवल यह सुनिश्चित करना चाहिए कि धारा 34 के तहत न्यायालय द्वारा शक्ति का प्रयोग प्रावधान के दायरे से अधिक नहीं हुआ है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि यदि धारा 34 के तहत न्यायालय द्वारा और धारा 37 के तहत अपील में न्यायालय द्वारा मध्यस्थ पंचाट की पुष्टि की गई है, तो इस न्यायालय को ऐसे समवर्ती निष्कर्षों को परेशान करने के लिए बेहद सतर्क और धीमा होना चाहिए।

15. XX XX XX

16. इस मोड़ पर यह देखना भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि अनुबंध की शर्तों की व्याख्या करते समय, पक्षकारों का आचरण और पत्राचार का आदान-प्रदान भी प्रासंगिक कारक होगा और उस पर विचार करना मध्यस्थ के अधिकार क्षेत्र में है। (देखें मैकडरमॉट इंटरनेशनल इंक बनाम बर्न स्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड (सुप्रा.); प्योर हीलियम इंडिया (पी) लिमिटेड बनाम ओएनजीसी, (2003) 8 एससीसी 593, डीडी शर्मा बनाम भारत संघ, (2004) 5 एससीसी 325)।

47. इस न्यायालय को 1996 के अधिनियम के अध्याय-V पर भी विचार करना होगा जहां मध्यस्थ कार्यवाही करने की प्रक्रिया प्रदान की गई है। 1996 के अधिनियम की धारा 18 और 19, वर्तमान विवाद के लिए प्रासंगिक होने के कारण, नीचे उद्धृत की गई हैं: -

"**18. पक्षकारों के साथ समान व्यवहार।**– पक्षकारों को समानता के साथ व्यवहार किया जाएगा और प्रत्येक पक्ष को अपना मामला प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाएगा।

19. प्रक्रिया के नियमों का निर्धारण–

1. मध्यस्थ न्यायाधिकरण सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) या भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (1872 का 1) द्वारा बाध्य नहीं होगा।

2. इस भाग के अधीन, पक्षकारों अपनी कार्यवाही के संचालन में मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रिया पर सहमत होने के लिए स्वतंत्र हैं।

3. उप-धारा (2) में निर्दिष्ट किसी भी समझौते में विफल होने पर, मध्यस्थ न्यायाधिकरण, इस भाग के अधीन, कार्यवाही को उस तरीके से संचालित कर सकता है जिसे वह उचित समझता है।

4. उप-धारा (3) के तहत मध्यस्थ न्यायाधिकरण की शक्ति में किसी भी साक्ष्य की स्वीकार्यता, प्रासंगिकता, भौतिकता और वजन निर्धारित करने की शक्ति शामिल है।

48. 1996 के अधिनियम की धारा 18 को पढ़ने से पता चलता है कि मध्यस्थ कार्यवाही के पक्षकारों के साथ समानता के साथ व्यवहार किया जाएगा और प्रत्येक पक्ष को अपना मामला प्रस्तुत करने का पूरा अवसर दिया जाएगा और जहां तक प्रक्रियात्मक भाग का संबंध है, मध्यस्थ दो पक्षों के बीच कोई भेदभाव नहीं कर सकता है और प्रत्येक पक्ष को अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए आगे पूर्ण अवसर दिए जाने की आवश्यकता है।

49. वर्तमान अपीलों में जो तथ्य रिकॉर्ड पर आए हैं, वे स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि दोनों पक्षों के साथ समान व्यवहार किया गया और उन्हें अपना पक्ष रखने का पूरा अवसर दिया गया। किसी भी तरह से दावेदार का असहयोग, या तो मामले पर बहस करने के लिए या दस्तावेज को रिकॉर्ड पर रखने के लिए, दोनों पक्षों को अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए पूर्ण अवसर से वंचित नहीं किया जा सकता है।

50. यह न्यायालय आगे पाता है कि 1996 के अधिनियम की धारा 19 के अनुसार, मध्यस्थ कार्यवाही नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 या भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 द्वारा बाध्य नहीं है। इस न्यायालय ने पाया कि धारा 19 की उप-धारा (2) में प्रावधान है कि पक्षकारों मध्यस्थ कार्यवाही के संचालन में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया पर सहमत होने के लिए स्वतंत्र हैं और धारा 19 की उप-धारा (3) में प्रावधान है कि किसी भी समझौते के अभाव में, जैसा कि 1996 के अधिनियम की धारा 19 (2) के तहत प्रदान किया गया है, मध्यस्थ कार्यवाही इस तरह से की जाएगी, मध्यस्थ इसे उचित मानता है। 1996 के अधिनियम की धारा 19 की उप-धारा (4) मध्यस्थ न्यायाधिकरण को किसी भी साक्ष्य की स्वीकार्यता, प्रासंगिकता, भौतिकता और वजन निर्धारित करने की शक्ति देती है।

51. मामले के वर्तमान तथ्यों में मध्यस्थ ने यदि यह पाया कि चूंकि दस्तावेजी साक्ष्य उस मुद्दे पर विचार करने के लिए पर्याप्त थे जो उसे भेजा गया था, तो इसके परिणामस्वरूप दावेदार को यह कहने का कोई अधिकार नहीं दिया जा सकता था कि मौखिक साक्ष्य की आवश्यकता थी या निगम के किसी भी कर्मचारी से जिरह की आवश्यकता थी।

52. इस न्यायालय ने पाया कि 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत पंचाट को रद्द करने के लिए दी गई शक्ति सीमित है और यदि मध्यस्थ पंचाट भारत की सार्वजनिक

नीति के साथ संघर्ष में है, तो यह मध्यस्थ पंचाट को रद्द करने का एक आधार हो है। 1996 के अधिनियम की धारा 34 में जोड़ा गया स्पष्टीकरण-1 यह भी स्पष्ट करता है कि किसी निर्णय को भारत की सार्वजनिक नीति के साथ संघर्ष में कहा जाता है यदि यह भारतीय कानून की मौलिक नीति के साथ उल्लंघन में है या नैतिकता या न्याय की सबसे बुनियादी धारणाओं के साथ संघर्ष में है। 1996 के अधिनियम की धारा 34 में संलग्न स्पष्टीकरण-2 यह बहुत स्पष्ट करता है कि क्या भारतीय कानून की मौलिक नीति का उल्लंघन है, इस परीक्षण में विवाद के गुणागुण की समीक्षा नहीं की जाएगी।

53. यह न्यायालय, 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत प्रदान किए गए हस्तक्षेप के दायरे पर विचार करते हुए, यह पाता है कि मध्यस्थ द्वारा पारित निर्णय की समीक्षा इस न्यायालय द्वारा साक्ष्य की पुन: सराहना करके या मामले के गुणागुण पर कोई निष्कर्ष देकर नहीं की जा सकती है।

54. उपरोक्त पैराग्राफ में बताए गए कारणों के लिए, वर्तमान अपील को स्वीकार किया जाता है और अतिरिक्त जिला और सत्र न्यायाधीश संख्या 14, जयपुर मेट्रोपॉलिटन द्वारा पारित दिनांक 01.04.2017 के आदेश, जिसमें 1996 के अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर प्रत्यर्थी के आवेदन को अनुमति दी गई थी, को अपास्त किया जाता है और मध्यस्थ द्वारा पारित 16.08.2016 के निर्णय को बरकरार रखा जाता है।

(अशोक कुमार गौड़), न्यायमूर्ति।

Preeti Asopa/Himanshu Soni

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।